IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

PURN SINGH AND KHUDADAD KHAN : THE UNSUNG FREEDOM FIGHTER

पूर्ण सिंह एवं खुदादाद खान : गुमनाम स्वतन्त्रता सेनानी

डॉ नूर हसन

असिस्टेंट प्रोफेसर

इतिहास विभाग

शहीद दुर्गा मल्ल राजकीय स्नातकोत्तर महविद्यालय, डोईवाला, देहारादून

सारांश : देहारादून का डोईवाला नगर आज उभरते शहरों में ख्याति प्राप्त कर रहा है, निकट ही जौलीग्रांट में हवाई अड्डा अवस्थित है। कभी यह स्थल घने जंगलों से घिरा एक छोटा सा गाँव था जहाँ पर हरिद्वार – देहारादून रेल लाइन के विस्तार के परिणाम स्वरूप एक छोटा सा रेलवे स्टेशन बनाया गया था। इसी धरती को प्रसिद्ध - कवि, लेखक, वैज्ञानिक और बुद्धिजीवी जिन्होंने उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के अंत में लोगों की सोच को आकार देने में मदद की थी, अपनी कर्मस्थली बनाया था। वह महान विभूति सरदार पूर्ण सिंह थे जिनको रसायनशास्त्री, हिन्दी के निबंधकार, एवं पंजाबी के प्रसिद्ध कवि के रूप में भी ख्याति प्राप्त है, पंजाबी कविता में उनको वही मुकाम हासिल है जो अल्लामा इक़बाल को उर्दू काव्य में । इनको अध्यापक पूर्ण सिंह, प्रोफेसर पूर्ण सिंह व डॉ पूर्ण सिंह के नाम से भी जाना जाता है । इनके प्रमुख सहयोगियों में एवं प्रेरणा स्रोतों में भाई वीर सिंह, डॉ बलबीर सिंह, डॉ सी॰ खुदादाद, आदि महान व्यक्ति का नाम आता है । इनके द्वारा गुरुओं की शिक्षाओं पर गर्व; परमात्मा की अभिव्यक्ति के रूप में प्रकृति के प्रति जुनून, त्याग और प्रेम की एक अद्वितीय तीव्रता; वैज्ञानिक तथ्यों के प्रति आजीवन समर्पण,दोस्तों पर भरोसा; और इन सबसे बढ़कर, आस्थाओं और विश्वासों में विविधता के प्रति सम्मान की भावना का संदेश दिया जो इन तीन महान आत्माओं के जीवन काल की तुलना में आज भी अधिक प्रासंगिक है ।

कुंजी शब्द : पूर्ण सिंह, भाई वीर सिंह, बलबीर सिंह, सी॰ खुदादाद, साहित्यिक , वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक योगदान ।

परिचय : भाई वीर सिंह को पंजाबी साहित्य के निर्माता के रूप में जाना जाता है और इसलिए उन्हे 'पंजाब की छठी नदी' भी कहा जाता है । वह एक कवि, उपन्यासकार, संपादक, व्याख्याता, इतिहासकार और पत्रकार थे।[1] उनके पिता सिक्ख नेता डॉ. चरनसिंह भी साहित्य में रुचि रखते । इस प्रकार सहित्य के संस्कार वीर सिंह को विरासत में मिले थे । उन्होंने नाटककार, उपन्यासकार, निबंध-लेखक, जीवनी-लेखक और कवि के रूप में साहित्य की सेवा की । भाई वीर सिंह पंजाब एवं सिंध बैंक के संस्थापकों में भी थे, इन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में 1956 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था ।

डॉ बलबीर सिंह[2] भाई वीर सिंह के छोटे भाई थे तथा प्रसिद्ध रसायन शास्त्री थे जिन्होने गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर से M.SC. तथा लंदन विश्वविद्यालय से Ph. D. की उपाधि प्राप्त की थी । डॉ. बलबीर सिंह एक प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। उनकी विद्वतापूर्ण उपलब्धियाँ बहुत उच्च कोटि की थीं। अपने बड़े भाई की तरह उन्हें अपने पूर्वजों से सीखने का प्यार, धर्मपरायणता और मानवतावाद विरासत में मिला था । वह मूल रूप से एक वैज्ञानिक होते हुए भी कई भारतीय शास्त्रीय भाषाओं में महारत रखते थे । वह अपने विचारों में भाई वीर सिंह, प्रोफेसर पूर्ण सिंह और डॉ. खुदादाद खान जैसे प्रख्यात विद्वानों से प्रभावित थे । महान परियोजना 'निरुक्त श्री गुरु ग्रंथ साहिब' की उनकी शुरुआत इतिहास में एक स्मारकीय उपलब्धि के रूप में दर्ज की जाएगी । डॉ. बलबीर सिंह ने डॉ. खुदादाद के साथ मिलकर 1925 में देहरादून में चीड़ के तेल से जीवन रक्षक दवाएं बनाने के लिए एक उद्योग स्थापित करने का निर्णय लिया, जो देहरादून के आसपास टेहरी राज्य की पहाड़ियों में पाए जाने वाले शंकुधारी पेड़ों से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता था । डॉ. बलबीर सिंह ने एक पायलट प्लांट पर एफिड्रीन हाइड्रो-क्लोराइड (Ephidrene Hydro-chloride) का निर्माण किया था जिसके नमूनों को अपने दोस्तों को दिखाने में उन्हे सदैव गर्व होता था । टिहरी दरबार के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री चक्रधर के साथ राजनीतिक मतभेदों के कारण दून घाटी के औद्योगीकरण की उनकी

परिकल्पना साकार नहीं हो सकी । बाद में डॉ. बलबीर सिंह ने कैंब्रिज प्रिपरेटरी स्कूल के प्रिंसिपल का पद संभाला । यह सुनकर कि श्री चक्रधर अपने पोते-पोतियों को देहरादून के एक स्कूल में दाखिला दिलाना चाहते हैं, डॉ. बलबीर सिंह उनसे मिले और अपने पहले के मतभेदों के बावजूद, जल्द ही श्री चक्रधर को अपने पोते-पोतियों को अपने स्कूल में दाखिला दिलाने के लिए मनाने में सफल रहे । श्री चक्रधर को इस बात का दुःख था कि उन्होंने पहले डॉ. बलबीर सिंह की योग्यता की सराहना नहीं की । लेकिन दूरदर्शिता की इस कमी के कारण देहरादून और टिहरी गढ़वाल के पहाड़ी इलाकों का भाग्य अलग होता और दून घाटी तेजी से औद्योगिक विकास के साथ आगे बढ़ती । मन-मस्तिस्क के इन गुणों ने डॉ. बलबीर सिंह को एक महान वैज्ञानिक, विद्वान, शिक्षाविद्, बैंकर और प्रशासक बना दिया, जो हमेशा क्षेत्रीय, संकीर्ण और अन्य संकीर्ण विचारों से परे सत्य की खोज में लगे रहते थे । उन्होंने हर उस दिल में अपने लिए घर बना लिया जिसके साथ

वे संपर्क में आए, और यह बिना किसी विरोधाभास के डर के कहा जा सकता है कि डॉ. बलबीर सिंह उन दुर्लभ इंसानों में से एक थे जिन्हें जीवित रहते हुए गर्मजोशी से प्यार किया जाता है।

डॉ. खुदादाद[3] ,एक मित्र और साथी रसायनशास्त्री, प्रोफेसर पूर्ण सिंह और उनके परिवार के लिए ताकत के स्तंभ बने रहे। उनके साहस और परिवार के प्रति समर्पण के लिए उनकी प्रशंसा की जाती है। खुदादाद खान रुड़की स्थित थामसन कॉलेज ऑफ सिविल इंजीन्यरिंग के कैमिस्ट्रि विभाग में कार्यरत थे परंतु एक अंग्रेज़ के साथ विवाद में उनको बर्खास्त कर दिया गया और वे डोईवाला में पूर्ण सिंह के साथ रहने लगे। अनेक स्वतन्त्रता सेनानी इनके पास डोईवाला आकार रुकते थे। गदर आन्दोलन से संबन्धित लाला हरदयाल अमेरिका निर्वासित हो गए थे लेकिन उनका परिवार भारत में ही छूट गया था जिसको अंग्रेज़ो से बचते हुए खुददाद खान अमेरिका पहुंचाकर आए थे। उनके मित्र सर जोगेंद्र सिंह उनके बारे में लिखते हैं: "पूर्ण सिंह और डॉ. खुदादाद, दोनों प्रशिक्षित रसायनज्ञों ने आर्थिक विकास के महान सपने देखे और उन्हें साकार करने के लिए काम किया और केवल फूल की खुशबू के लिए सांसारिक गतिविधियों की पीड़ा और अनुभव का सामना किया। उनकी दोस्ती जो कभी ख़त्म नहीं हुई थी वे अच्छे और बुरे समय में एक साथ आगे बढ़े, जैसा कि उन्होंने अपनी युवावस्था के वसंत ज्वार में किया था। पूर्ण सिंह कहते थे कि मेरा सारा दिल खुदादाद के अकेलेपन की चिंता में डूबा रहता है। खुदादाद खान के विषय में कहा जाता है कि उनके द्वारा भी पंजाबी,उर्दू, और फारसी में साहित्य लिखा गया लेकिन प्रकाशन से पूर्व ही उन्होने उसे नष्ट कर दिया था।[5]

बीसवीं सदी की शुरुआत में भारत के तत्कालीन वायसराय लॉर्ड कर्जन ने अपने एक पत्र में लिखा था: 'इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में एक प्रकार का अर्ध-आध्यात्मिक प्रवत्ति विकसित हो रही है। प्राचीन दर्शन पर निरंतर अन्वेषण किया जा रहा है तथा ऐसे आधुनिक विद्वानों और प्रोफेसरों की संख्या और प्रसिद्धि निरंतर बढ़ रही है जिनके द्वारा यूरोप द्वारा त्याग दिये गए विचारों के साथ भारतीय दर्शन का मिश्रण किया जा रहा है। इस अजीब मिश्रण से क्या निकलेगा - कौन कह सकता है?" उसी समय, लाहौर में खुदादाद नामक एक वरिष्ठ छात्र, द लाइट ऑफ एशिया का अध्ययन कर रहा था। उसके मन पर त्याग की काली छाया छाने लगी। एक अन्य प्रतिभाशाली छात्र हरदयाल भी उक्त दर्शन से संक्रमित हो गया , उनके मानसिक क्षितिज पर निर्वाण का स्वप्न छाया हुआ था। दूसरों को बचाने के लिए आत्म-बलिदान ने जल्द ही अपनी बाध्यकारी शक्ति का प्रयोग करना शुरू कर दिया। जापान में विज्ञान के छात्र पूर्ण सिंह ने 'परित्याग' के सार को वस्तुनिष्ठ रूप से समझने के लिए एक बौद्ध भिक्षु का जीवन जीना शुरू किया कर दिया था।

यह किताब, द लाइट ऑफ एशिया, का जादू था, जो मूल रूप से लगभग अठारह शताब्दियों पहले अश्वघोष द्वारा लिखी गई थी और अब एडविन अर्नोल्ड द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित की गई थी। यह संस्कृत से आधुनिक भाषा में शाब्दिक अनुवाद नहीं था, बल्कि कुछ और था। यह एक तरह से

पुराने सिद्धांतों को पिघलने वाली भट्टी में डालना और एक क्रिस्टलीकृत संस्करण को बाहर निकालना था । संलयन की प्रक्रिया में पुरानी लिपि ने अपना मूल धार्मिक प्रभाव खो दिया और सार्वभौमिक अपील के साथ एक शक्तिशाली मानव दस्तावेज़ के रूप में सामने आई ।

सरदार पूर्ण सिंह का जन्म 17 फ़रवरी, 1881 में ऐबटाबाद के निकट सलहद (Salhad) नामक छोटे से गाँव में हुआ था । पूर्ण सिंह की माता का नाम परमा देवी था।[6] वह एक धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं। गुरुवाणी में उनकी अगाध श्रद्धा थी। पूर्ण सिंह के पिता सरदार कर्तार सिंह एक छोटे से रेवेन्यू अधिकारी थे। वे प्रायः घर से बाहर रहते थे। उनका काम था गाँव-गाँव घूमकर खेतों की पैमाइश करना और फसलों की जाँच करके उनकी मालगुजारी तय करना । पूर्ण सिंह की आरम्भिक शिक्षा गाँव में ही सम्पन्न हुई। भाई बेला सिंह ने गुरुद्वारे में उन्हें गुरुमुखी पढ़ाया और एक मौलवी साहब ने मकतब में उर्दू सिखाया। 1895 में उन्होंने म्यूनिसिपिल बोर्ड हाईस्कूल हरिपुर से मिडिल परीक्षा पास की। मिडिल में उनका एक विषय फ़ारसी भी था। 1897 में उन्होंने रावलपिण्डी के मिशन स्कूल से पंजाब यूनिवर्सिटी की मैट्रीकुलेशन परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद उन्होंने अपना नाम डी. ए. वी. कालेज लाहौर में लिखाया। 1899 में उन्होंने इंगलिश, मैथमेटिक्स, संस्कृत और केमिस्ट्री के साथ एफ. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। आगे पढ़ने के लिए उन्होंने इसी कालेज में बी. ए. कक्षा में नाम लिखाया । लाहौर में 'अहलूवालिया खालसा विरादरी' नामक सिखों का एक संगठन था। 'बिरादरी' मेधावी छात्रों को विदेशों में उच्चतर अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करती थी। विरादरी के सदस्य छात्र पूर्ण सिंह की प्रतिभा और वक्तृत्व-कला से विशेष प्रभावित थे । अभी आपने बी. ए. में प्रवेश लिया ही था कि 'बिरादरी' ने जापान जाकर रसायनशास्त्र के उच्चतर अध्ययन के लिए आपको छात्रवृत्ति प्रदान कर दी ।[7]

सन् 1900 में आप जापान गये और वहाँ टोकियो की इम्पीरियल यूनिवर्सिटी में आपको औपध रसायन (Pharmacential Chemistry) के विशेष छात्र के रूप में प्रवेश मिल गया। जापान में रसायन विज्ञान के अध्ययन के साथ ही आपने वहाँ कला-संस्कृति और अध्यात्म में भी गहरी रुचि दिखायी। जापान की प्राकृतिक सुषमा देखकर आपको अपने गाँव की याद आ जाती थी। जापान के लोगों की सरलता, निश्छलता, स्नेहशीलता और कर्ममय जीवन के प्रति समर्पण ने आपको मुग्ध कर लिया। टोकियो में 'इण्डो जापानी क्लव' नाम की एक संस्था थी । इसमें भारतीय और जापानी छात्र रहते थे। पूर्ण सिंह इस क्लब के मंत्री चुन लिये गये। उन्होंने जापानी भाषा पर अच्छा अधिकार कर लिया तथा उन्होने जर्मन भी सीखी थी । [8]

पूर्ण सिंह, जो बाद के वर्षों में सबसे महान पंजाबी कवियों में से एक और आधुनिक पंजाबी साहित्य के अग्रदूत के रूप में जाने गए, तब इक्कीस साल का एक युवा व्यक्ति था, जो टोक्यो में फार्मास्युटिकल रसायन विज्ञान में कठिन प्रशिक्षण से गुजर रहा था । उनमें आदर्शवाद का एक तत्व, एक अस्पष्ट उदासी, स्वस्थ निष्पक्षता के उल्लास से भिन्न आनंद की चांदनी थी । शारीरिक

रूप से वह सुंदर, स्वभाव- मानसिक रूप से अस्थिर, मानसिक रूप से बेचैन, भौतिक लाभ का त्याग करने के लिए तैयार था। से

टोक्यो में ही उनकी मुलाकात प्रसिद्ध जापानी भिक्षु विद्वान्, ओकाकुरा (Okakura) से हुई। यह मुलाक़ात लाभदायक रही और इसका उन पर स्थायी प्रभाव पड़ा आप इतने प्रभावित हुए कि बौद्ध भिक्षु हो गये। इसी समय स्वामी राम को सूचना प्राप्त हुई कि सितम्बर 1902 ई॰ जापान में एक सर्व धर्म सम्मेलन आहूत होने वाला है जैसा कि शिकागों में 1893 ई॰ में आयोजित हो चुका था अतः सम्मेलन में प्रतिभाग करने जापान चले गए परंतु वहाँ पहुँचकर उन्हें ज्ञात हुआ कि सर्व धर्म सम्मेलन का समाचार झूठा था। वह उसी वर्ष में अमेरिका चले गए, जहां से वह 1905 में भारत लौट आए, एक साल बाद उनकी मृत्यु हो गई। जापान में स्वामी राम का प्रवास बहुत ही यद्यपि बहुत कम समय का था तथापि यह बहुत प्रभावशाली रहा। उनके व्याख्यान, आदर्शवादी स्वर में होते हुए भी, व्यावहारिक स्वर में धीमे थे और उनका दृष्टिकोण व्यावहारिक था। टोक्यो कॉलेज ऑफ कॉमर्स में 'सफलता का रहस्य' पर अपने व्याख्यान के बाद वे पूर्ण सिंह से मिले और उनसे बड़े ही स्नेहपूर्ण तरीके से कहा, 'मैं (जापान में) धर्म संसद के लिए नहीं, बल्कि पूर्ण का मार्गदर्शन करने आया हूं', जिस पर पूर्ण सिंह की प्रतिक्रिया थी: 'और मैं तुरंत उसके प्यार में एक साफ-सुथरा साधु बन गया, न कि उसकी किसी भी बात के लिए, क्योंकि तब मैं उसमें से कुछ भी नहीं समझता था, और मुझे यकीन नहीं है कि अब मैं सब कुछ समझता हूं।

जापान में अपने तीन साल के प्रवास के दौरान पूर्ण सिंह एक अलग ही इंसान बन गये थे। उन्होंने जापान में अकादमिक और तकनीकी प्रयोगशालाओं में विज्ञान व औद्योगिकी का ज्ञान प्राप्त किया , जो ज्यादातर जर्मन तकनीक पर आधारित था। उन्होंने जापानी कला की भावना को भी आत्मसात किया। 1903 में जब वे भारत लौटे तो उनके पास विज्ञान में उच्च शिक्षा का प्रमाणपत्र था। उनके पास औद्योगिक इकाइयों और फार्मास्युटिकल मशीनरी के ब्लू प्रिंट का एक बंडल भी था इसके अतिरिक्त उनमें एक कलाकार की विशिष्ट मौलिकता थी और वे स्वयं को एक महान वक्ता मानने लगे थे। अभी भी उन्होने गेरूआ रंग का लबादा पहना हुआ था। अब उसके सामने समस्या थी कि वह क्या करे, उसका पेशा क्या हो ? सुकरात के बारे में कहा जाता है कि एक बार समुद्री यात्रा के दौरान उन्हें समुद्री डाकुओं ने पकड़ लिया और कोरिंथ (Corinth) में दास के रूप में बेच दिया। ज़ेनियाडेस नाम के एक कोरिंथियन ने उसे खरीदा और उससे अपना व्यापार पूछा। सुकरात ने उत्तर दिया कि वह मनुष्यों पर शासन करने के अलावा कोई व्यापार नहीं जानता है, और वह ऐसे व्यक्ति को पुनः बेचना चाहेगा जिसे स्वामी की आवश्यकता हो। ज़ेनियाडेस ने उसे अपने दो बेटों का शिक्षक बनाया।

सुकरात की तरह, पूर्ण सिंह भी अनजाने में ही सही, किसी ऐसे व्यक्ति को दास के रूप में बेचा जाना चाहता था जिसे स्वामी की आवश्यकता थी । यही उसके जीवन की पहेली थी। एक महिला उनका इंतजार कर रही थी । उसे एक ऐसे स्वामी की आवश्यकता थी जो एक दास के रूप में पूर्ण निष्ठा से उससे बंधा हो, वह महिला माया देवी थी, जिसके साथ पूर्ण सिंह की शादी भारत आने के छह महीने से भी कम समय में हुई थी। पत्नी ने उन्हे इतनी सहानुभूति, प्यार और भक्ति दी कि जल्द ही उनकी पीड़ित और संवेदनशील आत्मा को उसकी उपस्थिति से कोमलता महसूस हुई जिसका पता उनकी इस कविता से चलता है -

> मैंने दर्द में उसे खोजा, उसने मेरी ओर देखा और कहा, 'मैं आनंद हूं ।' मैंने उसे खुशी में खोजा, उसने मेरी ओर देखा और कहा, 'मैं दर्द हूं।' त्याग में वे आये और फुसफुसाए, 'मैं जंगलों में नहीं, मोती के महलों में रहता हूँ।' जब मैं महलों में था, तो उन्होंने कहा, 'जाओ और मुझे जंगल में ढूंढो।' जब मैंने स्त्री की ओर से मुंह मोड़ लिया, तो वह मुझ पर हंसा और बोला, 'देखो मत, मैं सुंदर स्त्री हूं ।'[9]

1903 से 1907 तक अस्थिर जीवन के बाद पूर्ण सिंह को 1908 में फॉरेस्ट कॉलेज (वन अनुसंधान संस्थान -FRI) देहरादून में रसायन वैज्ञानिक नियुक्त किया गया, इस पद पर वे 1919 तक बने रहे, हालांकि विभिन्न पदनामों के तहत 1912 तक उनका साहित्यिक लेखन नगण्य रहा । उन्होंने लाहौर से 'द थंडरिंग डॉन' नामक अखबार शुरू किया और लगभग एक साल तक इसका संपादन किया । फिर स्वामी राम (1906) की मृत्यु के बाद, उन्होंने मास्टर अमीर चंद (1908) द्वारा एकत्रित और प्रकाशित उनके कार्यों का एक व्यापक परिचय लिखा, जिन्हें बाद में दिल्ली साजिश मामले में दोषी ठहराया गया और फांसी दे दी गई थी । इसी अवधि के दौरान उनकी मुलाकात डॉ. खुदादाद (1905) से हुई जो उनके साथ रहते थे और उनकी मुलाकात लाला हरदयाल और जे.एम. चटर्जी से हुई थी । जे.एम. चटर्जी क्रांतिकारी गतिविधियों में शामिल थे तथा उसका संबंध प्रसिद्ध क्रांतिकारी रासबिहारी बोस से था, जिन्होंने लॉर्ड हार्डिंग पर बम फेंका था । बोस देहरादून के फॉरेस्ट कॉलेज में हेड क्लर्क थे और उन्होंने पूर्ण सिंह की प्रयोगशाला से विस्फोटक सामग्री चुराई थी । यद्यपि पूर्ण सिंह भी अपने तरीके से एक क्रांतिकारी थे, लेकिन राष्ट्रवाद पर उनके विचार अलग थे । उन्होंने जापान में स्वामी राम से कहा था कि दुनिया उनका देश है, जबकि जो क्रांतिकारी उनसे भारत में मिले थे और उनमें से कई की क्षेत्रीय सीमाएं थीं ।[10]

1912 में, पूर्ण सिंह 5वें सिख शैक्षिक सम्मेलन में भाग लेने के लिए सियालकोट गए, जिसकी अध्यक्षता पटियाला के तत्कालीन महाराजा एच.एच. ने की थी। वहां उनकी मुलाकात पहले से ही बहुत सम्मानित संत भाई वीर सिंह से हुई, जिन्होंने आगे चलकर उन पर गहरा प्रभाव डाला। वीर सिंह के साथ अपनी पहली मुलाकात के बारे में लिखते हुए, उन्होंने कहा: "उन्हें देखकर, मुझे एहसास हुआ कि कैसे महान राम के पैर के स्पर्श ने जेल में बंद अहल्या को मुक्त कर दिया था

। पूर्ण सिंह ने पहले अंग्रेजी में सम्मेलन को संबोधित किया दर्शकों की लगातार माँग पर उन्होने पंजाबी में में भाषण दिया। यह पहली बार था जब वह सार्वजनिक अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में पंजाबी का उपयोग कर रहे थे, और हालांकि उनका पंजाबी लहजा थोड़ा अजीब लगता था और कभी-कभी वह शब्दों के लिए लड़खड़ाते थे, ।

1912 में पूर्ण सिंह की उम्र मात्र 33 वर्ष थी।[11] उनकी प्रतिभा परिपक्व थी और उनकी भाषा ने अपनी कुछ कठोरता खोकर अधिक प्राकृतिक प्रवाह प्राप्त कर लिया था। उनकी सोच में भी काफ़ी बदलाव आया था। अब तक उनके जीवन का मार्गदर्शक सिद्धांत सौंदर्यशास्त्र था। इस प्रकार उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति में एक रहस्यवादी स्वर जोड़ा जो उनके शेष जीवन का जुनून बन गया ।

यह अब उनके नए सौंदर्यशास्त्र का मुख्य बिंदु बन गया, जिसकी उन्होंने अलग-अलग तरीकों से बार-बार पुष्टि की। इस दावे के साथ उन्होंने कला को, जो उनकी प्राथमिक खोज हुआ करती थी, गौण स्थिति में पहुंचा दिया। उनकी प्रेरणा के बिना न तो धर्म है और न ही कला । विषय को स्पष्ट करते हुए, उन्होंने तर्क दिया: जब प्रेरणा ने हमें छोड़ दिया है, तब धर्म नैतिकता, परोपकार, मानवता, चर्च, मस्जिद और मंदिर, अस्पतालों और अनाथालयों का रूप धारण करता है, क्योंकि प्रेरणा को ऐसी बैसाखियों की आवश्यकता नहीं होती है... मनुष्य को रस्सियों की आवश्यकता नहीं होती है। उसकी गर्दन के चारों ओर, केवल जानवरों को जंजीर से बांधने की जरूरत है। स्पष्ट अनिवार्यताओं के मृत नैतिक कोड जानवरों के लिए रस्सियाँ हैं, क्योंकि मनुष्य हमेशा अपने अस्तित्व के सर्वोच्च कानून का पालन करते हैं ।

वैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति के रूप में, पूर्ण सिंह को यह स्थिति स्वीकार करनी पड़ी कि विचार तभी सत्य हैं जब उन्हें सत्यापित और पुष्ट किया जा सके। फिर भी अनुभव के प्रति उनके प्रेरणादायक दृष्टिकोण ने उन्हें कल्पना से उत्पन्न होने वाले विचारों को आत्मसात करने की शक्ति दी। लेकिन आध्यात्मिक शून्य की ओर ले जाने वाली मानसिक अमूर्तता के विपरीत, उनकी कल्पना में हमेशा एक ठोस सामग्री होती थी। वह जीवन भर परिवर्तनशील, तरल और सक्रिय रहे। उन पर लगातार काम नहीं करने का आरोप लगाया गया है ।

फिर भी इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि उनके जीवन में कुसमायोजन तथा चिड़चिड़ापन भी था । अपने बारे में बोलते हुए, उन्होंने एक बार कबूल किया था, मैं हमेशा किसी न किसी तरह के जुनून के साथ जीवित रहना पसंद करता था । हमेशा विस्फोटक और कभी-कभी ज्वालामुखीय, जब मैं अपने सामने सब कुछ बहा ले जाता हूं। उनकी पत्नी माया देवी के लिए ऐसी प्रतिभा के साथ रहना एक तनाव रहा होगा। श्रीमती कार्लाइल ने एक बार टिप्पणी की थी कि किसी भी महिला को जिसे आत्मा की शांति पसंद है, किसी लेखक से शादी नहीं करनी चाहिए। पूर्ण सिंह इस मामले में कार्लाइल से भी अधिक कार्लाइलवादी थे। वह अपनी पत्नी के कारण होने वाले तनाव के प्रति सचेत थे, और गद्य कविताओं की अपनी सात टोकरी उन्हें समर्पित करते हुए उन्होंने लिखा:

'इस धरती पर इन उड़ते दिनों की मेरी साथी, श्रीमती माया देवी जी, अमूल्य प्रेम की कृतज्ञ स्वीकृति में उसने मुझे प्रस्ताव दिया और जिसके साथ उसने अपनी आत्मा की महान चुप्पी में मेरे लिए दैनिक क्रूस पर चढ़कर जीवन पथ पर मेरी परेशानियों में मुझे शांत किया।

पूर्ण सिंह का जीवन 1907 से 1919 तक फॉरेस्ट कॉलेज, देहरादून से जुड़े एक रसायनज्ञ के रूप में व्यतीत हुआ था । उन्होंने आवश्यक तेलों पर शोध किया जिसके कारण भारत में तारपीन उद्योग की स्थापना हुई । उन्होंने एक विशेष रूप से अनुकूलित डबल सतह कंडेनसर तैयार करके कपूर को आसवित करने की विधि को सिद्ध किया, जो अभी भी एक संग्रहालय के रूप में कॉलेज में संरक्षित है । उन्होंने रोशा ग्रास ऑयल, एक लघु वन उत्पाद, के रासायनिक और आर्थिक डेटा को निर्धारित करने के लिए अर्थशास्त्री पियर्सन के साथ मिलकर काम किया । उन्हें रोशा घास से बहुत उम्मीदें थीं और अंततः उन्होंने इस घास को एक प्रभावी और स्वीकार्य कृषि बनाने के एकमात्र उद्देश्य के साथ शेखूपुरा में एक फार्म की स्थापना की यद्यपि यह उद्यम सफल नहीं रहा ।[12]

केवल साहित्य का व्यवसाय ही उन्हें कुछ वास्तविक संतुष्टि देता था । फार्म में उन्होंने जो पंजाबी किताबें लिखीं, उनमें ग्रामीण पंजाब की झलक मिलती है । उनके पद्य और गद्य- जिनकी शैली सभी स्थापित रूढ़ियों से हटकर थी- ने पंजाबी साहित्यिक शैली में एक नए युग का निर्माण किया । अंग्रेजी में उनकी अधिकांश पुस्तकें, जो पहले लिखी गई थीं, इंग्लैंड में प्रकाशित हुईं, जहां उन्हें उत्साहजनक प्रतिक्रिया नहीं मिली । पूर्ण सिंह के विषय में बलबीर सिंह लिखते है कि उनके साथ मेरा घनिष्ठ व्यक्तिगत जुड़ाव 1915 में शुरू हुआ । कई वर्षों तक हम देहरादून में एक ही घर में एक साथ रहे थे एक बार वह बीमार हो गए तो उनके इलाज की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी मुझ पर आ गई । उन्होने बहुत संघर्ष किया परन्तु उनकी सेहत में तेजी से गिरावट आती चली गयी तभी भी वह अपने आस-पास के सभी लोगों के लिए मधुर बने रहे । सिर्फ एक दिन उन्होंने अपना गुस्सा दिखाया जब एक मित्र ने उन्हें एक विशेष संत का उपचारात्मक आशीर्वाद लेने के लिए प्रार्थना करते हुए लिखा था, जिससे वह बहुत परेशान हो गए थे । उन्होंने मुझे कुछ कहने के लिए बुलाया, लेकिन उनकी आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी. जब मैंने अपने कान उनके होठों के पास रखे, तो उन्होने कहा कि इस शरीर के लिए वह कभी किसी से याचना नहीं करेगा और फिर वह बेहोश हो गये , जिससे वे एक घंटे के बाद जागे । इस घटना के दो दिन के बाद ही 31 मार्च, 1931 को उनका निधन हो गया ।[13] पूर्ण सिंह की मृत्यु के बाद खुदादाद खान आजीवन उनके परिवार के साथ रहे ।

पूर्ण सिंह के पास यद्यपि आर्थिक विकास के महान विचार थे लेकिन उसे पैसे से कोई प्यार नहीं था और पैसा उन लोगों के पास नहीं रहता जो इसका उपयोग करना चाहते हैं। उच्च मूल्यों ने उन्हें कार्य करने के लिए प्रेरित किया और उन्होंने ऐसे प्रयोग शुरू किए जिनसे उन्हें अक्सर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लेकिन भौतिक क्षेत्र में भी उनका काम जीवित रहा। उनके खेत

से निकला लेमन ग्रास तेल अब बाज़ार में है और युद्ध के दौरान उनकी छोटी प्रयोगशाला ने दुनिया को थाइमोल की आपूर्ति की।[14] गहरी अपरिवर्तनीय पूर्ण सिंह और खुदादाद की दोस्ती सांप्रदायिक समझ के लिए एक प्रकाशस्तंभ के रूप में काम कर सकती है । और इसकी आध्यात्मिक संपदा देश को समृद्ध कर सकती है। बसंत कुमारी सिंह, पूर्ण सिंह की यादें (Reminiscences of Puran Singh पंजाबी विश्वविद्यालय, 1980) में लिखती हैं कि "खुदादाद की समर्पित दोस्ती पूर्ण के जीवन में सबसे बड़े गंभीर प्रभावों में से एक थी , वह उसे 'भापा दाद' कहते थे, जिसका अर्थ है "मेरा भाई, दाता '. हालाँकि उनके मध्य मतभेद और व्यवधान भी पैदा हुए, फिर भी, वह अपने दोस्तों और अपने दोस्त के परिवार के प्रति, बिल्कुल अंत तक वफादार और समर्पित रहे... हमें छोड़ने से पहले, उन्हें पता था कि अंत आ रहा है। वह शांत और निर्मल थे . उनकी आवाज में भावना का कंपन नहीं था । उन्हे कोई पछतावा या चिंता नहीं थी... आखिरी दिन उनकी ताकत ने उन्हे निराश कर दिया । उन्होने कोशिश की लेकिन चल नहीं सके । धीरे से आठ प्यार भरी बाँहों ने उन्हे एक बच्चे की तरह उठाया, और बरामदे में एक बिस्तर पर लिटा दिया... डोईवाला में हमारे घर से लगभग आधा मील की दूरी पर एक छोटा सा कब्रिस्तान है जो हरे-भरे खेतों और जंगली झाड़ियों से घिरा हुआ है। यहां उन्होंने खुदादाद को सदैव के लिए आराम करने हेतु सुला दिया । आज भी डोईवाला के चाँदमारी के कब्रिस्तान में डॉ खुदादाद खान की कब्र स्थित है ।[15]

Refrences :

1. Britannica, The Editors of Encyclopaedia. "Bhai Vir Singh". Encyclopedia Britannica, 1 Jan. 2024, https://www.britannica.com/biography/Bhai-Vir-Singh. Accessed 3 March 2024.
2. सरदार पूर्ण सिंह अध्यापक के निबन्ध ; सम्पादक -प्रभात शास्त्री, कौशांबी प्रकाशन, दारागंज, इलाहाबाद, 1913, पृष्ट संख्या 09 -12 ।
3. पूर्वोक्त पृष्ट संख्या 14-15 ।
4. https://bharatdiscovery.org/india/सरदार पूर्ण सिंह ।
5. https://bharatdiscovery.org/india/सरदार पूर्ण सिंह ।
6. Puran Singh - A Life Sketch : Maya Devi Puran Singh, Sahitya Akademi, Delhi, 1993 PP- 06
7. पूर्वोक्त पृष्ट संख्या 02 .
8. अध्यापक पूर्ण सिंह ; राम चन्द्र तिवारी, साहित्य अकादमी, दिल्ली , 1998 पृष्ट 15 ।
9. Prof. Puran Singh : Edited byMaj. G.S. Ahluwalia, Prof. Puran Singh Memorial Committee, Delhi, 1988 PP. 25-30.
10. Puran Singh, Dr. Balbir Singh; Punjab Digital Library, PP 318-326 .
11. A Blazingh Glory, Savitri Sahni; Punjab Digital Library, PP 84.
12. Puran Singh - A Life Sketch : Maya Devi Puran Singh, Sahitya Akademi, Delhi, 1993 PP- 105-107.

13. अध्यापक पूर्ण सिंह ; राम चन्द्र तिवारी, साहित्य अकादमी, दिल्ली , 1998 पृष्ट 23 ।
14. Virk, Hardev. (1998). Professor Puran Singh (1881-1931): Founder of Chemistry of Forest Products in India. Current science. 74. 1023-24.
15. Reminiscences of Puran Singh, Basant Kumari Singh; Punjabi University, 1980 , PP 48 .